*ऋणदाताओं और उधारकर्ताओं के लिए कारोबार अब पहले जैसा नहीं रहा**

एन. एस. विश्वनाथन

मुख्य अतिथि श्री एम. दामोदरन, डॉ. धींगरा, निदेशक एनआईबीएम, मंच पर आसीन अन्य मान्यवर, विशिष्ट बैंकर, संस्था के संकाय सदस्य और स्टाफ, गर्वित अभिभावक और सभी स्नातक होने वाले विद्यार्थी, और साथ ही मेरे मीडिया से आए मित्र, बैंक प्रबंधन स्नातकों का एक और बैच पास आउट होने के इस अवसर पर शामिल होने और अपने कुछ विचार व्यक्त करने का मौका मुझे देने के लिए मैं एनआईबीएम का शुक्रिया अदा करता हूं।

मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने कहा था, "बुद्धि और चरित्र- वास्तविक शिक्षा का यही लक्ष्य है"। यदि मैं उनके इस कथन की प्रबंध शिक्षा के संदर्भ में व्याख्या करना चाहूं, तो मैं यह कहूंगा कि प्रबंध शिक्षा का मुख्य लक्ष्य कारोबारी कुशाग्रता और व्यावसायिक आचार-शास्त्र सिखाना है। जब यह उपाधि बैंकिंग और वित्त में विशेषज्ञता वाली संस्था से हो, तब आचार-शास्त्र पर बल देना और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। आज के इस दौर में, जब हम दबावग्रस्त आस्तियों की बड़ी समस्या से जूझ रहे हैं, सही काम को सही तरीके से करने की आवश्यकता पर जितना भी जोर दिया जाए, वह कम ही है।

आज के परिदृश्य में जब एक बैंकिंग विनियामक बैंक प्रबंधन स्नातकों से बात करता है, तो यह केवल दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के संबंध में ही हो सकता है, क्योंकि हमें इस समस्या से शीघ्र निपटना है ताकि सरकारी क्षेत्र के बैंकों के वर्चस्व वाली हमारी बैंकिंग प्रणाली निकट भविष्य में चिरस्थायी संवृद्धि पथ पर अग्रसर हो सके। तदनुसार, मैं रिज़र्व बैंक द्वारा इस दिशा में उठाए गए हालिया कदमों को स्पष्ट करूंगा, और इसके एक भाग के रूप में भारतीय रिज़र्व बैंक के 12 फरवरी 2018 के परिपत्र के बारे में विस्तार से बताऊंगा, जिसमें हमने दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के लिए नया ढांचा तैयार किया है।

दबावग्रस्त आस्तियां

भारत में बैंकिंग प्रणाली में अनर्जक आस्तियों (एनपीए) सहित दबावग्रस्त आस्तियों का क्रमिक विकास नीचे ग्राफ में दर्शाया गया है। अंतर-सामयिक तुलना में गलतियों से बचने के लिए दबावग्रस्त आस्तियों को केवल एनपीए के रूप में देखने के बजाय संपूर्ण रूप में देखना सही होगा, क्योंकि कोई खाता तभी एनपीए बनता है, जब उसका उस रूप में निर्धारण किया जाता है। जैसा कि मैंने अगस्त 2016 में

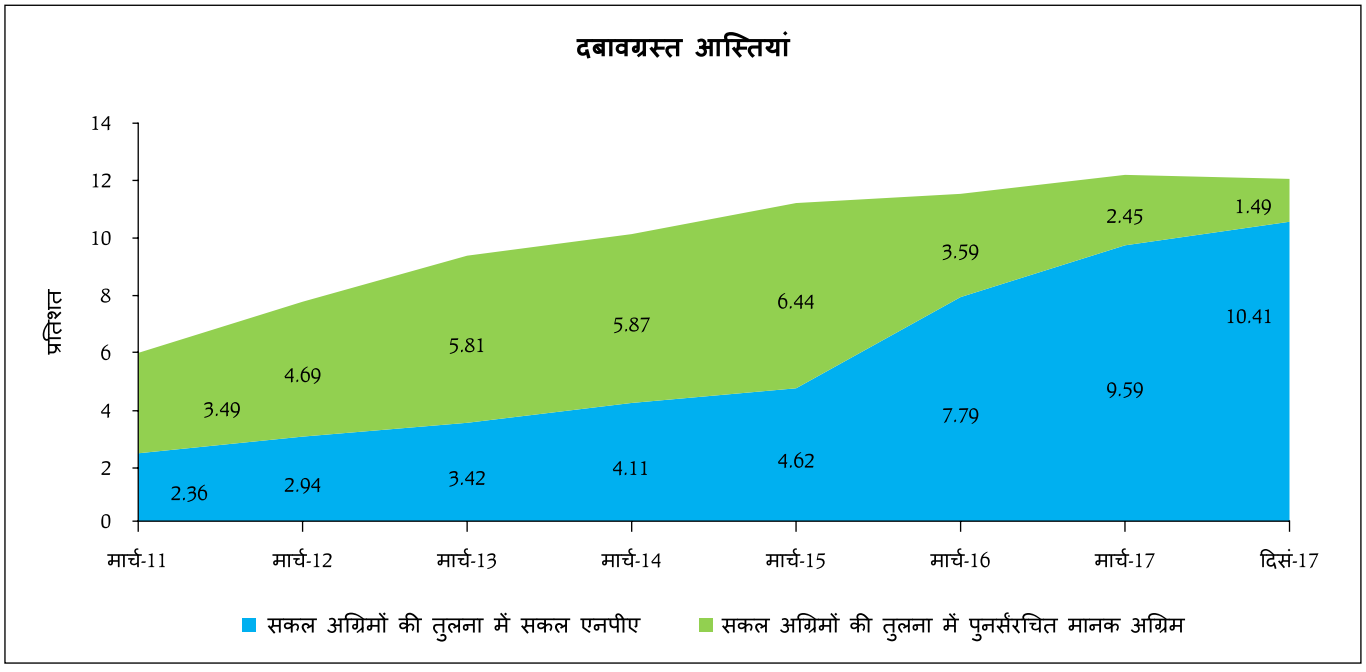

* एन.एस.विश्वनाथन, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक - 18 अप्रैल 2018 - राष्ट्रीय बैंक प्रबंध संस्थान (एनआईबीएम), पुणे के चौदहवें दीक्षांत समारोह में दिया गया व्याख्यान।

भारतीय बैंकों की आस्ति गुणवत्ता : भावी दिशा (https://rbi.org.in/scripts/BS_SpeechesView.aspx?Id+1023) विषय पर अपने व्याख्यान में स्पष्ट किया था, दबावग्रस्त आस्तियों में यह वृद्धि दरअसल 2006-2011 के दौरान तीव्र ऋण संवृद्धि का परिणाम है। इस अवधि के दौरान नाममात्र / सांकेतिक ऋण संवृद्धि वर्ष-दर- वर्ष 20 प्रतिशत से अधिक थी, और उद्योग में नाममात्र संवृद्धि से भी काफी बेशी थी।

जैसा कि ग्राफ से देखा जा सकता है, 2011 से दबावग्रस्त आस्तियों में लगातार वृद्धि दर्ज की गई है; किंतु यदि हम एनपीए को देखें, तो 2014 तक वृद्धि मंद थी, और विशेषत: 2015-16 के बाद यह ज्यादा नाटकीय रूप से बढ़ी। ऐसा इसलिए, कि रिज़र्व बैंक ने आस्ति गुणवत्ता समीक्षा (एक्यूआर) की, जिसके कारण कतिपय ऋणों, जिन्हें बैंकों ने तब मानक आस्तियां माना था, की एनपीए के रूप में पहचान की गई। इसलिए एनपीए 2014-15 के 4.62 प्रतिशत से बढ़ कर 2015-16 में 7.79 प्रतिशत हो गए और दिसंबर 2017 तक बढ़ कर 10.41 प्रतिशत के उच्च स्तर पर पहुंच गए।

आस्ति गुणवत्ता समीक्षा

फरवरी 2014 में रिज़र्व बैंक ने दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के लिए ढांचा जारी किया। बड़े ऋणों पर सूचना का केंद्रीय निधान (सीआरआईएलसी) की स्थापना करना इस ढांचे का एक महत्वपूर्ण भाग था। सीआरआईएलसी ने बैंकों के ₹50 मिलियन से ऊपर के सभी एक्सपोजरों को ग्रहण किया। इन आंकड़ों तक केवल रिज़र्व बैंक की ही नहीं, बल्कि बैंकों की भी पहुंच थी। भारतीय रिज़र्व बैंक ने पहली बार इस प्रकार का पर्यवेक्षी डेटा उत्पन्न किया, जिसने रिज़र्व बैंक को बड़े उधारकर्ताओं के प्रति बैंकिंग प्रणाली के एक्सपोजर का व्यापक रूप दिखाया, और यह भी कि कैसे एक ही उधारकर्ता को विभिन्न बैंकों द्वारा विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा रहा है। हालांकि हमारा दृष्टिकोण यह था कि आस्ति वर्गीकरण अलग-अलग बैंकों के वसूली के अभिलेख पर आधारित होना चाहिए, किंतु सीआरआईएलसी ने हमें निष्पक्ष रूप से इस बात का मूल्यांकन करने का साधन दिया कि क्या भिन्न-भिन्न वर्गीकरण वास्तव में उचित हैं? एक बैंक से दूसरे बैंक के बीच लेखांकन मानक रखने के लिए निधियों की गतिविधि देखने के लिए इसने हमें बेहतर अंतर्दृष्टि दी।

इस तरह, सीआरआईएलसी द्वारा समर्थित एक्यूआर के द्वारा हम पूरी बैंकिंग प्रणाली में व्याप्त बड़े बैंक ऋणों का दृश्य देख सके और इन एक्सपोजरों के स्वास्थ्य की सही स्थिति का समग्र रूप से मूल्यांकन कर सके। इनके कारण एक साथ ऐसे एनपीए की पहचान की गई, जिन्हें बैंकों द्वारा एनपीए नहीं माना गया था, और ऐसे खातों की पहचान भी की गई, जिनका दर्जा विभिन्न घटनाक्रमों/समयों में घटाया जाना अपेक्षित था, यदि आवश्यक हो तो समाधान या खाता उन्नयन जैसे समापन हासिल नहीं किए गए। बैंकों में वास्तविक आस्ति गुणवत्ता की परिणामी पहचान पिछले तीन वर्ष के दौरान बैंकों के एनपीए में आए उछाल को स्पष्ट करती है।

भारत में समाधान संरचनाओं का उद्भव

मैं 12 फरवरी 2018 के परिपत्र में प्रकाशित ढांचे की बात करने से पहले उन समाधान संरचनाओं पर एक नजर डालना चाहूंगा जो इससे पूर्व बनाई गई थीं। पुनर्रचना का एक सामान्य सिद्धान्त यह है कि यदि कोई भी राशि बकाया है तो खाते को डाउनग्रेड किया जाए। रिज़र्व बैंक ने अगस्त 2001 में कॉर्पोरेट ऋण पुनर्रचना (सीडीआर) प्रणाली बनाई, जिसके अंतर्गत यदि पुनर्रचना प्लान में कतिपय शर्तों को पूर्ण किया गया हो, तो आस्ति गुणवत्ता को डाउनग्रेड करने की आवश्यकता के बिना ऋण पुनर्रचना की जा सकती थी। प्रारंभ में सीडीआर प्रणाली ने अच्छा काम किया। किंतु बाद के वर्षों में इसमें निहित आस्ति गुणवत्ता संबंधी छूट/सहनीयता का प्रयोग दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के लिए कम, और उनके गैर निष्पादन के निर्धारण से बचने के लिए ही अधिक किया जाने लगा। इसलिए, मई 2013 में हमने आस्ति वर्गीकरण में दी गई छूट को 01 अप्रैल 2015 से वापिस लेने के निर्णय की घोषणा की। तथापि, एनपीए में बढ़ोतरी को देखते हुए रिज़र्व बैंक ने कतिपय प्रकार की पुनर्रचना योजनाओं के लिए आस्ति वर्गीकरण का लाभ लेने की अनुमति दी। इनमें कार्यनीतिक ऋण पुनर्रचना योजना (एसडीआर), परियोजना ऋणों के लिए लचीली संरचना तथा दबावग्रस्त आस्तियों की संवहनीय संरचना के लिए योजना (एस4ए) शामिल थीं। इस प्रकार, हालांकि पुनर्रचना में आस्तियों को डाउनग्रेड करने का सिद्धान्त बना हुआ था, फिर भी अपवाद के लिए स्थान उपलब्ध था, बशर्ते कि पुनर्रचना की रूपरेखा कुछ शर्तों को पूरा करती हो।

हमारा यह मत है कि जब हमारे पास कोई प्रभावी दिवालियापन कानून नहीं था, उस समय पुनर्रचना योजनाओं की आवश्यकता थी। इन योजनाओं ने मुख्यत: समाधान के लिए ऐसा ढांचा तैयार किया, जो सामान्यत: दिवालिया

और शोधन - अक्षमता कानून के तत्वावधान में किया जाना चाहिए। दबावग्रस्त आस्तियों की गहन पुनर्रचना, दबावग्रस्त उधारकर्ता के स्वामित्व/ प्रबंधन में परिवर्तन, ऋण सुविधाओं की इष्टतम संरचना, तथा जब भी एक्सपोजर आर्थिक रूप से अव्यवहार्य हों, हेयरकट इन योजनाओं के मुख्य फोकस बिंदु थे।

दिवालिया और शोधन अक्षमता संहिता, 2016 (आईबीसी), जो एक व्यापक शोधन अक्षमता संहिता है, को 2016 में अधिनियमित और अधिसूचित किया गया। इस संहिता में उधारकर्ता चूक का ऋणदाताओं के सामूहिक निर्णय द्वारा समय पर समाधान करने पर विचार किया गया है। यह संहिता प्रक्रिया-उन्मुख तथा समयोन्मुख, दोनों है। यह प्रक्रियोन्मुख है, अर्थात् इसमें उधारकर्ता को एक बार दिवालियापन के लिए स्वीकार करने के बाद लिए जाने वाले विविध कदमों को विस्तार से निर्धारित किया गया है; तथा यह समयोन्मुख है, क्योंकि यह दिवालिया समाधान के लिए सख्त समय-सीमाएं निर्धारित करता है, जिनका पालन न करने पर उधारकर्ता पर परिसमापन की कार्रवाई करनी पड़ेगी।

बड़ी आस्तियों में दबाव के प्रति बैंकरों का सामान्य रवैया ऐसे खातों के गैर-निष्पादन को कानूनी तौर पर मानने से बचने का रहा है। इसीलिए हमारे पास बड़ी संख्या में असफल पुनर्रचना वाले मामलों का इतिहास रहा है, क्योंकि इन योजनाओं का प्रयोग आस्तियों का समाधान करने के बजाय डाउनग्रेड से बचने के लिए किया गया। वास्तविक आस्ति गुणवत्ता की पहचान को स्थगित करना बैंकों और उधारकर्ताओं, दोनों को सूट करता था। बैंक अपनी बहियों को उससे ज्यादा साफ सुथरी दिखा सकते थे, जितनी वे वास्तव में नहीं थीं; और उधारकर्ता चूककर्ता का तमगा लगाने से बच जाते थे, जबकि वे वास्तव में चूककर्ता थे। गवर्नर महोदय ने 14 मार्च 2018 के अपने व्याख्यान (https://www.rbi.org.in/home.aspx) में इसे उधारकर्ता और बैंकर की मिलीभगत के रूप में बताया है, जिसमें निंदात्मक संकेत नहीं है, बल्कि यह निहितार्थ है कि बैंक ऋण को आगे बढ़ाने और सब सही है का ढोंग रचने का सर्वविदित कार्य करते रहे। यहां यह बताना जानकारीपूर्ण होगा कि एसडीआर स्कीम लागू करने के अधिकतर मामलों के परिणामस्वरूप प्रबंधन में परिवर्तन नहीं हुआ, जिसका अर्थ यह है कि अठारह महीनों की गतिरोध अवधि के दौरान इस स्कीम का प्रयोग केवल आस्ति वर्गीकरण का लाभ उठाने के लिए किया गया। एस4ए के मामले में सफलता दर कुछ बेहतर रही, क्योंकि इस स्कीम की प्रयोज्यता की कुछ शर्तें थीं तथा निगरानी समिति (ओसी) ने पहले से ही इस संरचना का कड़ाई से अनुपालन सुनिश्चित किया। तथापि, समग्र योजना में ऐसे मामलों का कुल मूल्य बहुत अधिक नहीं था।

बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 में संशोधन करके रिज़र्व बैंक को सशक्त बनाया जाना ताकि वह चूक के विनिर्दिष्ट मामले समाधान के लिए आईबीसी को संदर्भित करने हेतु बैंकों को निदेश दे, इस बात का स्पष्ट संकेत था कि बड़े उधारकर्ताओं के विरुद्ध दिवालिया आवेदन फाइल करने हेतु बैंकों के लिए एक बाहरी धक्का जरूरी था। जैसा कि आप जानते होंगे, आईबीसी के अधीन संदर्भित किए जाने वाले मामलों के निर्धारण के लिए रिज़र्व बैंक ने 2017 में एक आंतरिक सलाहकार समिति (आईएसी) का गठन किया था। उक्त की सिफारिशों के आधार पर ऐसे संदर्भ के लिए दो चरणों में कुल 41 खातों की पहचान की गई। आईएसी का यह मत था कि भविष्य में दिवालिया आवेदन फाइल करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक को स्वयं आवधिक रूप से मामलों की पहचान करने के बजाय एक विश्वसनीय स्थायी ढांचा विकसित करना चाहिए।

नए प्रतिमान

आईएसी की सिफारिशें निम्नलिखित कारणों से अतिशय अर्थपूर्ण रहीं। पहला, आईबीसी कॉर्पोरेट दबाव से निपटने के लिए एक व्यापक और समयबद्ध ढांचा है। दूसरा, इस संबंध में नीति की सुस्पष्ट अभिव्यक्ति के द्वारा सभी हितधारकों के बीच निश्चितता आएगी। तीसरा, आईबीसी के अंतर्गत संदर्भ के लिए एक विश्वसनीय स्थायी ढांचा बनाना बीआर अधिनियम में संशोधन का तार्किक परिणाम है; यदि ये शक्तियां सीमित समय अथवा मामलों की सीमित संख्या के लिए प्रयोग की जातीं, तो यह न्यायसंगत नहीं होता। अंतिम और अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि रिज़र्व बैंक ने हमेशा से दिवालियापन और शोधन-अक्षमता के लिए विनियामक द्वारा अधिदेशित योजनाओं के बजाय एक कुशल विधिक संरचना को वरियता दी है, और आईएसी की सिफारिशें इसी के अनुरूप हैं।

अतएव, यह निर्णय लिया गया कि आईएसी की सिफारिशों को स्वीकार किया जाए। चूंकि देश में एक ऐसी प्रक्रिया-उन्मुख संहिता को अधिनियमित किया गया था, जिसमें परिसमापन से पहले समाधान विकल्पों को ढूंढ़ने का भी प्रावधान किया गया था, इसलिए दबावग्रस्त आस्तियों के न्यायालय से बाहर समाधान के लिए एक

अन्य प्रक्रियोन्मुख विनियामक ढांचे को अनावश्यक माना गया। रिज़र्व बैंक ने यह तय किया कि दो प्रक्रिया-उन्मुख ढांचे रखने के बजाय दो पूरक ढांचे रखे जाएं, जो सुचारू रूप से एक - दूसरे के साथ मिल जाएं। एक, जिसमें चूक के बाद उचित अवधि के भीतर न्यायालय से बाहर समाधान खोजने के पूर्ण लचीले प्रावधान है, और इसमें असफल होने पर दूसरा, अर्थात् आईबीसी के अंतर्गत सांविधिक प्रक्रिया शुरू की जाएगी।

रिज़र्व बैंक के 12 फरवरी 2018 के परिपत्र में दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के लिए रेखांकित नया ढांचा उपर्युक्त फिलॉसॉफी का परिणाम है। आपने देखा होगा कि पहले के ढांचों की तुलना में यह अधिक परिणाम -अभिमुख है तथा इसमें पुनर्रचना योजना की प्रक्रिया तथा रूपरेखा तय करने के लिए बैंकों के पास काफी लचीलापन है। संशोधित ढांचे में उन विभिन्न प्रक्रियाओं तथा इन्पुट बधाओं को हटा दिया गया है जो पुनर्रचना के लिए पहले की विनियामक योजनाओं में सन्निहित थीं। बल्कि जब तक विनिर्दिष्ट समय-सीमा के भीतर एक विश्वसनीय समाधान प्लान कार्यान्वित किया जाता है, तब तक इसमें ऋणदाताओं और उधारकर्ताओं को जितना संभव है, स्वतंत्रता/लचीलापन दिया गया है। यदि ऋणदाता और दबावग्रस्त उधारकर्ता समय-सीमा के भीतर समाधान योजना बनाने में नाकामयाब होते हैं, तो आईबीसी के अंतर्गत संरचित दिवालियापन समाधान प्रक्रिया शुरू की जाएगी।

अब मैं कुछ अन्य ध्यान देने लायक विशेषताओं पर प्रकाश डालना चाहूंगा। फिलहाल उधारकर्ता बैंकों से उधार या उसकी तुलना में पूंजी बाजार से निधियां लेकर पैसा जुटाते समय जिस अंतरपणन/ मध्यस्थता (आर्बिट्रेज) का फायदा उठा रहे हैं, संशोधित ढांचे में उसे कम करने का प्रयास किया गया है। यदि कोई उधारकर्ता कॉर्पोरेट बांड पर कूपन/मूलधन के भुगतान में एक दिन का भी विलंब करता है, तो बाजार में उधारकर्ता को अत्यधिक दण्ड मिलेगा - उदाहरणार्थ रेटिंग डाउनग्रेड की जाएगी, बांड पर प्रतिलाभ अत्यधिक बढ़ जाएंगे, आगे निधीयन करने की लागत बढ़ जाएगी, निवेशकों द्वारा वाद दायर किए जाएंगे, आदि। अब तक बैंकों में चूक पर ऐसी प्रतिक्रियाएं नहीं होती हैं। जब अतिदेय राशि 90 दिन के बाद भी बकाया रहती है, केवल तभी ऋण को अनर्जक आस्तियों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है; इसलिए ऋणदाताओं और उधारकर्ताओं का प्रयास खातों के कानूनी तौर पर एनपीए के रूप में वर्गीकरण से बचने का रहा है, चाहे वास्तविक स्थिति कुछ भी हो। इसका अर्थ यह है कि भारत में बैंक ऋणों में निहित कर्ज करार अपनी पवित्रता/शुद्धता खोते जा रहे हैं, विशेषत: जहां उधार बड़ी राशियों के लिए हैं। इसमें परिवर्तन लाना और कर्ज करारों की शुद्धता वापिस लाना आवश्यक है, वरना कहीं ऐसा न हो कि बैंक ऋण इक्विटी से भी गौण (सब-ऑर्डिनेट) बन जाएं। नए ढांचे का लक्ष्य निश्चित रूप से यही करने का है। बैंकों को शीघ्र चुकौती किया जाना महत्वपूर्ण है, क्योंकि बैंक अपने बैंकिंग लाईसेंस के बलबूते पर अन्य के साथ-साथ सामान्य व्यक्तियों से असीमित, असंपार्श्वीकृत निधियां प्राप्त करते हैं।

संशोधित ढांचा बैंकों को यह आदेश भी देता है कि लेनदार के रूप में अपने देनदारों पर संविदाओं का प्रवर्तन करें, अथवा संविदाओं पर पुन: बातचीत करें, ताकि पहले, वे चूक की स्थिति में न हों। जहां संविदाओं पर पुन: समझौता किया गया है, वहां वह बैंक की बहियों में आस्ति वर्गीकरण तथा प्रावधानीकरण के द्वारा प्रतिबिंबित होना चाहिए। यही कारण है कि ढांचे में बैंकों से अपेक्षा की गई है कि एक दिन की चूक भी रिपोर्ट करें तथा उस पर इस प्रकार समाधान योजना तैयार करें, ताकि उधारकर्ता ऐसी चूक की तारीख से 180वें दिन चूक की स्थिति में न हो। आपने नोट किया होगा कि हालांकि चूक को साप्ताहिक आधार पर रिपोर्ट करना अनिवार्य है, किंतु अभी भी ऋण का गैर निष्पादक आस्ति के रूप में वर्गीकरण 90 दिन के अतीत के बकाया (पास्ट ड्यू) मानदंड के आधार पर ही है। इस प्रकार, हमारा इरादा ऋणदाता और उधारकर्ता को ये जताते रहना/इशारा देना है कि वे समय पर सुधारात्मक कार्रवाई करें, ताकि आस्ति गुणवत्ता में खराबी की स्थिति से यथासंभव बचा जा सके। साथ ही, जब चूक को एक केंद्रीय डेटा बेस को रिपोर्ट किया जा रहा है, जिसे सभी बैंक देख सकते हैं, तो ऋण अनुशासन में और अधिक सुधार होने की आशा है।

संशोधित ढांचे के अंतर्गत समाधान योजना के कार्यान्वयन के लिए रखी गई समय- सीमाओं की पर्याप्तता पर कुछ टिप्पणियां की गई हैं। नए ढांचे में ऋणदाताओं से चूक के 180 दिन के भीतर समाधान योजना बनाने की अपेक्षा की गई है, और कुछ लोगों का कहना है कि समाधान योजना बनाने के लिए 180 दिन का समय अपर्याप्त है, विशेषत: कई ऋणदाता शामिल हों। भुगतान में "चूक" करना उधारकर्ता के वित्तीय दबाव का पहला (लीडिंग) नहीं, बल्कि बाद वाला (लैगिंग) संकेतक है, और ढांचे में चूक होने के बाद समाधान योजना बनाने के लिए 180 दिन का प्रावधान किया गया है। ऋणदाताओं को अधिक सक्रिय रूप से अपने

उधारदाताओं की निगरानी करने की जरूरत है। उधारकर्ता द्वारा चूक करने की प्रतीक्षा करते रहने के बजाए उसे अग्रिम संकेतकों तथा ऋण प्रसंविदाओं के पुन: समझौते के मुद्दों का एक साथ प्रयोग करते हुए उधारकर्ता पर वित्तीय दबाव की पहचान करने में समर्थ होना चाहिए। दबाव की इस प्रकार शीघ्र पहचान करने तथा इसके जवाब में ऋण में बदलाव करने से ऋणदाता को अपेक्षित समाधान योजना बनाने के लिए पर्याप्त समय उपलब्ध हो जाएगा।

संशोधित ढांचे के तहत एक अन्य प्रमुख परिवर्तन किया गया है और वह यह है कि समाधान योजनाओं को अब उधारदाताओं द्वारा एकल अथवा संयुक्त रूप से क्रियान्वित किया जा सकता है। पूर्व में उधारदाताओं को एक संयुक्त उधारदाता फोरम (जेएलएफ) बनाना पड़ता था जिसमें बहुमत में मौजूद उधारदाताओं द्वारा लिया गया निर्णय अल्पमत में मौजूद उधारदाताओं हेतु बाध्यकारी होता था। यद्यपि, अल्पमत उधारदाताओं के पास जेएलएफ से बाहर निकलने का विकल्प मौजूद होता था। संशोधित ढांचे में, रिज़र्व बैंक ने जेएलएफ संबंधी दिशानिर्देश वापस ले लिए हैं। उधारकर्ताओं, जिनका कई बैंकों के साथ एक्सपोज़र है, के साथ संव्यवहार संबंधी अपने स्वयं की आधार नियमावली बनाने के संबंध में बैंकों को पूर्ण कार्य-स्वतंत्रता एवं लचीलापन प्रदान कर दिया गया है। पूर्ववर्ती प्रथा में समाधान योजना सभी बैंकों में लगभग समान थी। संशोधित ढांचे के तहत, उधारदाता अपनी आंतरिक नीतियों और जोखिम वहनीयता के अनुसार समाधान प्रक्रिया बना सकते हैं और उन्हें क्रियान्वित कर सकते हैं। इस प्रकार, कुछ जगह जैसा महसूस किया जा रहा था, नया ढांचा एकरूपता की अपेक्षा नहीं रखता है। तथापि, पहली चूक होने के 180 दिनों की समाप्ति पर यदि उधारकर्ता बैंक का चूककर्ता बना रहता है तो बैंक के लिए यह अनिवार्य है कि वह मामले को आईबीसी को संदर्भित कर दे। अत: विनियमन इस बात की अपेक्षा रखता है कि यदि ऋण का पुन:रचना नहीं किया गया है तो मौजूदा करार के तहत उधारकर्ता चूक की स्थिति में न बना रहे और यदि पुन:रचना की गई है तो वह पुन:रचित अनुसूची में बना रहे। अत: मैं यह एकदम स्पष्ट कर देना चाहूंगा कि: जो बुदबुदाहट चल रही है कि नया ढांचे में सभी उधारदाताओं के लिए एकरूपता अनिवार्य कर दी गई है, तथ्य यह है कि मामला इसका एकदम विपरीत है। इस संबंध में हम कुछ भी अनिवार्य नहीं कर रहे हैं। वस्तुत:, ढांचे का नीतिनिदेशक तत्व यह है कि जहां तक संभव हो प्रक्रिया के संबंध में कुछ अनिवार्य नुस्खे लागू किए जाएं।

जैसा कि मैंने जोर देकर कहा है कि संशोधित ढांचे का झुकाव परिणामों की ओर ज्यादा है न कि प्रक्रिया की ओर। उधारदाताओं को इस बात की पूर्ण स्वतन्त्रता है कि वे समाधान योजना की रूपरेखा के संबंध में निर्णय ले सकें। तथापि, समाधान योजना की विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए यह अपेक्षित है कि क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों द्वारा इसका स्वतन्त्र विश्वसनीयता मूल्यांकन किया जाए। रेटिंग सम्मति की बेहतर विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए नया ढांचा इस बात का प्रावधान करता है कि विश्वसनीयता सम्मति के लिए 'जारीकर्ता भुगतान' प्रारूप के विपरीत 'उपयोगकर्ता भुगतान' प्रारूप का उपयोग किया जाए - यहां उपयोगकर्ता बैंक हैं। विश्वसनीयता सम्मति दोषपूर्ण या संदेहास्पद न हो इसके लिए क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों हेतु प्रोत्साहन बाजार में उनकी विश्वसनीयता और प्रतिष्ठा है जो कि निरंतर कारोबार हेतु उनकी मुख्य पूंजी है। भविष्य में हम आवश्यक मूल्यांकन मानकों को लागू करेंगे ताकि प्राप्त स्कोर के आधार पर रेटिंग एजेंसियों के निष्पादन का मूल्यांकन किया जा सके।

कुछ चिंताएं प्रकट की गई हैं कि 1-दिवसीय चूक से संबंधित खंड दुष्कर है। ये चिंताएं निराधार हैं। मैं आपको इसका कारण बता देता हूं। नकद उधार खाते के लिए 30-दिन का ट्रिगर बनाए रखा गया है। सावधि ऋणों के संदर्भ में, जहां पुनर्भुक्तान कार्यक्रम पहले से निश्चित है, उधारकर्ताओं के लिए आवश्यक है और निश्चित रूप से उनके पास पर्याप्त नोटिस होती है कि वे समय पर निधियां जुटा सकें। उधार के पुनर्भुक्तान के संबंध में व्यावहार में परिवर्तन की आवश्यकता है। नई रिपोर्ट प्रणाली के तहत बैंकों से प्राप्त प्रथम कुछ रिर्पार्टों के आधार पर मैं यहां कहना चाहूंगा कि देय तारीख पर भुगतान न करना बैंकों और उधारकर्ताओं के लिए एक सामान्य प्रक्रिया बन गई प्रतीत होती है। आंकड़े बताते हैं कि बड़ी संख्या में उधारकर्ता, यहां तक कि कुछ अत्यधिक रेटिंग प्राप्त, 1-दिवसीय चूक मानदंड पर असफल हो गए हैं। इसे बदलना होगा। यदि उधारकर्ता नकदी प्रवाह समस्या के कारण देय तारीख पर भुगतान नहीं कर पाया है तो बैंकों को इसे पूर्व संकेतक के रूप में देखना होगा और जिसके लिए तत्काल कार्रवाई करनी होगी। यदि उधारकर्ता के पास देय तारीख को भुगतान करने की क्षमता मौजूद है और वे सामान्यतया विलंब करते हैं अथवा अन्य आर्बिट्राज विकल्प की तलाश में हैं तो इसे अवश्य बदलना होगा। बैंकरों को अपने ग्राहकों को यह चेतावनी देनी होगी कि 1-दिवसीय चूक से वे समाधान प्रक्रिया की निगरानी में आ जाएंगे।

उधारकर्ताओं को भी यह महसूस करना होगा कि वे करार के अनुसार अपने भुगतान दायित्वों को पूरा करें और अब देय तारीख से 60/90 दिनों के बाद भुगतान कर देना मात्र ही पर्याप्त नहीं होगा।

यहां से मेरे लिए संशोधित फ्रेमवर्क पर अगली टिप्पणी करने का मार्ग प्रशस्त होता है। सामान्य रूप से जिन बातों को कहने से बचा जाता है, उनमें से एक यह है कि खरीददारों, जिनमें संभवतः बहुतायत में सरकारी निकाय हैं, द्वारा भुगतान में विलंब किया जाता है और इसके परिणामस्वरूप चूक की घटनाओं में काफ़ी बढ़ोतरी की संभावना बन जाती है। पहली बात यह कि ऋणों की चुकौती योजना बनाते समय इस प्रकार के अजीबोगरीब जोखिमों को ध्यान में रखते हुए योजना को उधारकर्ताओं के नकदी प्रवाह के अनुकूल बनाया जाना चाहिए। दूसरे, उधारकर्ता की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होनी चाहिए जिससे कि वह अपने पास उपलब्ध पर्याप्त बफर (कर्ज चुकौती प्रारक्षित निधि खाता) का सहारा लेते हुए नकदी के प्रवाह में आने वाले अल्पकालिक उतार-चढ़ाव से पार पा सके। वर्तमान में समस्या यह है कि बैंक अत्यधिक मात्रा में लीवरेज की छूट देने लगे हैं जिससे इस बात की संभावना ही नहीं बचती कि उधारकर्ता आपात स्थितियों से निपटने में समर्थ हो सके। यह स्थिति एक ऐसे कारोबारी माहौल का प्रतिफल है जिसमें न तो ऋणदाता और न ही उधारकर्ता ऋण करार की शुचिता का ईमानदारी से पालन करने के प्रति निष्ठावान था। इस प्रकार की खराब ऋण व्यवस्था को बदलने के लिए प्रोत्साहन दिए जाने चाहिए और संशोधित फ्रेमवर्क का उद्देश्य खास तौर पर इसी लक्ष्य को प्राप्त करना है। मैं यहाँ इस बात का उल्लेख करना चाहता हूं कि ग्राहकों से भुगतान न पाने वाले ऐसे उधारकर्ता जिनके पास कम समय में धन जुटा पाने के साधन उपलब्ध नहीं होते, उनके लिए इस फ्रेमवर्क में एक छूट दी गयी है। ऋणों की पुनर्रचना फ्रेमवर्क को उन सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) पर जान-बूझकर लागू नहीं किया गया है जिनके द्वारा लिए गए उधार की राशि ₹250 मिलियन या उससे कम होती है। मार्च 2016 में उनके लिए बने समाधान फ्रेमवर्क में हमने कोई परिवर्तन नहीं किया है।

बीते दिनों एक बात देखने में आयी कि ऋणों को अनर्जक की श्रेणी में वर्गीकृत होने से बचाने के लिए उन्हें निरंतर बनाए रखा गया। साथ-ही-साथ, यह भी जरूरी है कि कारोबार की वास्तविक मांगों को पूरा करने के लिए दिए जाने वाले अतिरिक्त वित्तपोषण और ऋणों को निरंतर बनाने के लिए संशोधित फ्रेमवर्क में यह अपेक्षा की गयी है कि वित्तीय कठिनाई से जूझ रही फर्मों को अतिरिक्त क्रेडिट की सुविधाएं देते हुए ऐसे मामलों को पुनर्रचना के मामले माना जाए और फ्रेमवर्क में ऐसे मानदण्डों की सूची भी दी गयी है जिसके आधार पर यह निर्णय लिया जा सकता है कि उधारकर्ता वास्तव में वित्तीय कठिनाई से गुजर रहा है या नहीं। कुछ लोगों का मानना है कि ये मानदण्ड आवश्यकता से अधिक व्यापक हैं। बैंकों को चाहिए कि वे अपने बोर्डों द्वारा अनुमोदित नीतियों के माध्यम से मानकों का निर्धारण कर लें और उनका कड़ाई से पालन करें। हम आशा कर सकते हैं कि इन मानकों को तय करते समय बोर्ड तर्कसम्मत दृष्टिकोण अपनाएंगे और चुनिंदा मामलों में विशेष रियायतों को स्वीकार नहीं करेंगे।

कुछ लोग 12 फरवरी के परिपत्र को निकालने के समय पर सवाल उठाते हैं। इस संबंध में, मैं यही कहूंगा कि कुछ परिवर्तनों में विलंब करने की अपेक्षा उन्हें जल्दी लागू करना अच्छा होता है। दीर्घावधि से लंबित किसी सुधार को लागू करने के लिए किसी पूर्णतया उपयुक्त समय की तलाश कभी समाप्त न होने वाली प्रक्रिया बन सकती है। मुझे इस बात में संदेह है कि इन सुधारों के समय को गलत मानने वाले यह बता सकते हैं कि इन्हें लाने का सही समय क्या है, और क्या वह समय भविष्य के किसी समय से भिन्न हो सकता है! ऐसा कहते हुए मैं इस बात का उल्लेख करना चाहूंगा कि 6ठे द्विमासिक मौद्रिक नीति वक्तव्य, 2017-18 में यह टिप्पणी की गयी थी कि ऋणों की वृद्धि में आयी तेजी, प्राथमिक पूंजी बाजार बड़ी मात्रा में संसाधन संग्रहण और पूंजीगत वस्तुओं के उत्पादन तथा आयात में आये सुधार से अर्थव्यवस्था में निवेश गतिविधियाँ फिर से बढ़ने के प्रारंभिक संकेत मिलते हैं। इसके अलावा, बैंकों के पुन: पूंजीकरण की प्रक्रिया प्रारंभ हो चुकी है जिससे वे अपने ऋण नुकसान के लिए प्रावधान करने में और, यदि उनका पूंजीकरण बेहतर तरीके से हुआ है तो, ऋण संवृद्धि करने में भी सक्षम बन गए हैं। जैसा कि पहले भी उल्लेख किया गया है, रिज़र्व बैंक ने बैंकों को इस प्रकार के निदेश जारी किए हैं कि वे आर्थिक परेशानी में फँसे बड़े उधारकर्ताओं के विरुद्ध दिवाला आवेदन फाइल करें और ऐसे आवेदनों का निपटान आईबीसी द्वारा किया जा रहा है। इन सभी उपायों से ऋण प्रवाह और अधिक बढ़ना चाहिए और इनसे नये सिरे से निवेश की माँग पैदा होने की संभावना है जिससे संवृद्धि की दर में तेजी आएगी। रिज़र्व बैंक का ऐसा मानना है कि आर्थिक परेशानी में फँसे उधारकर्ताओं की समस्याओं के निपटान पर केंद्रित एक फ्रेमवर्क अपेक्षित है जिसमें ऋण करार की शुचिता का सम्मान और उसका प्रवर्तन करते हुए यह सुनिश्चित किया जा सके कि पिछले ऋण चक्र में देखे गए आधिक्य की पुनरावृत्ति न की जाए और अब से कुछ वर्षों बाद इसी प्रकार की परिस्थितियां हमारे समक्ष न हों।

चार्ट 2: बड़े उधारकर्ताओं की हिस्सेदारी

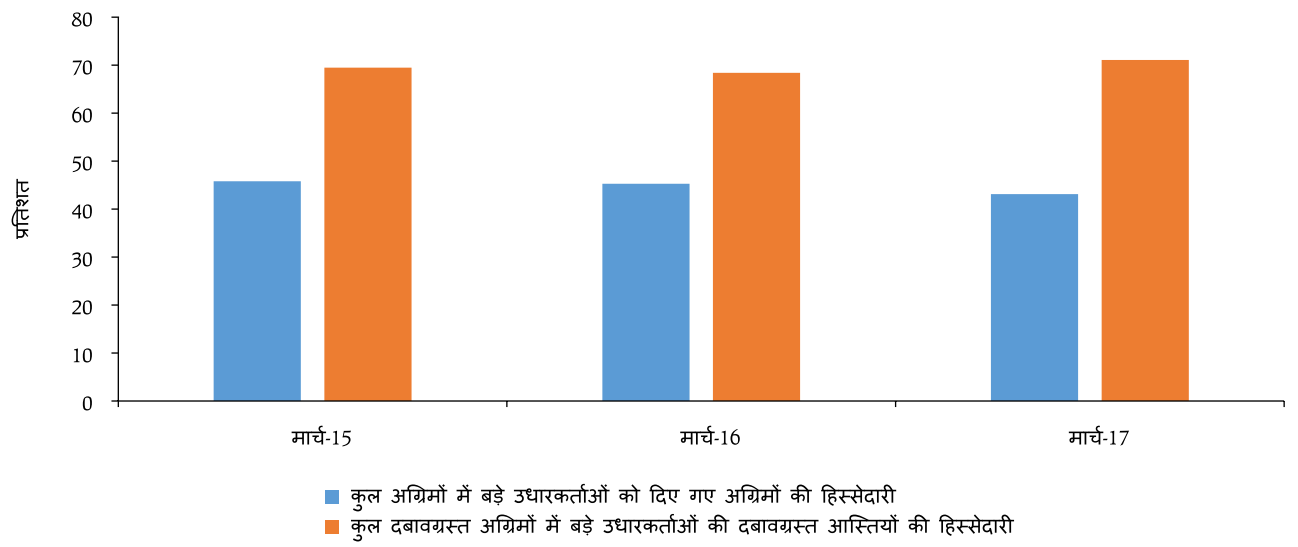

संशोधित फ्रेमवर्क का एक महत्वपूर्ण इक्विटी दृष्टिकोण भी है। जैसा कि रिज़र्व बैंक की एक के बाद एक वित्तीय स्थिरता रिपोर्टों में इसका उल्लेख किया गया है, कुल अग्रिमों में बड़े अग्रिमों की हिस्सेदारी की तुलना में देखें तो बड़े अग्रिमों में दबावग्रस्त आस्तियों का हिस्सा अधिक है (चार्ट-2)। यदि बड़े अग्रिमों पर दबाव से इस प्रकार नहीं निपटा गया जिससे चूक की घटनाओं में कमी आए और साथ ही यदि चूक हो भी, तो हानि सीमित हो, तो इसके परिणामस्वरूप बैंक की आस्तियों पर जोखिम समायोजित प्रतिलाभ कम रहेगा जिसकी भरपायी के लिए अपेक्षाकृत छोटे उधारकर्ताओं हेतु उधार-दर में वृद्धि करनी पड़ सकती है। दूसरे शब्दों में कहें तो इसका तात्पर्य होगा बैंक इक्विटी पर कम प्रतिलाभ, और चूंकि बहुत से दबावग्रस्त बैंकों में मुख्य शेयरधारिता सरकार की ही है, अत: राजकोषीय चैनल से इसका प्रभाव बाहर भी पड़ेगा।

इक्विटी दृष्टिकोण से देखने पर एक और मुद्दा सामने आता है। हमें यह अवश्य समझना होगा कि अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के बीच गतिशीलता और उद्यमिता लाने वाली छोटी-छोटी फर्मों और नई इकाइयों को बड़े उधारकर्ताओं से प्रतिस्पर्धा में अनुचित रूप से बाहर होना पड़ता है, क्योंकि ये बड़े उधारकर्ता चूक और खराब प्रदर्शन के बावजूद हमेशा ही आसानी से निधियां जुटा लेते हैं।

अंतिम बात, जैसा कि आप जानते होंगे, बैंकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने बही-खाते में ऋणों के लिए कुछ प्रावधान करके रखें ताकि भविष्य में संभावित नुकसान की भरपायी की जा सके। इसका आशय यह है कि जैसे-जैसे ही किसी ऋण से आय या वसूली की संभावना कम होने लगती है, वैसे-वैसे उसके लिए किए गए प्रावधान की राशि बढ़ायी जानी चाहिए। यदि बैंक की लाभप्रदता को होने वाली परिणामी क्षति को नियंत्रित करना है तो दबाव के प्रारंभिक संकेत मिलते ही दबावग्रस्त आस्तियों से निपटने की कार्रवाई प्रारंभ की जानी चाहिए। इस तरह से, बैंकरों को जोखिम वृद्धि के प्रति सचेत रहना चाहिए क्योंकि इससे चूक की संभावना बढ़ जाती है और उन्हें (बैंकरों को) थ्रू लोन कोवेनेंट्स, वर्धित संपार्श्विकों, और/या अधिक रिस्क प्रीमियम जैसी घाटाजन्य चूक को काबू में रखने के लिए पर्याप्त उपाय तत्परता पूर्वक करने चाहिए। यदि समय रहते इस तरह के उपाय नहीं किए गए तो दिवालियापन की कार्यवाही से इतर कोई कार्य कर पाने के लिए बहुत विलंब हो जाता है। उधारी के कारोबार की चिंता बनी रहने के साथ में, बैंकों द्वारा त्वरित कार्रवाई किए जाने के संबंध में निम्नसूचित सारणी 1 और चार्ट 3 में पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत किए गए हैं, जिनके कारण ऋण-हानि बहुत कम हुई है। यह नोट किए जाने की अपेक्षा है कि समाधान के दौर का देश की कारोबारी सुगमता की रैंकिंग पर असर पड़ा है और इस रैंकिंग में सुधार के लिए आईबीसी के साथ में नया फ्रेमवर्क महत्वपूर्ण कदम साबित होगा।

वास्तव में, इस प्रकार समयानुकूल हस्तक्षेप करना बैंक का दूसरा स्वभाव होना चाहिए। इसी प्रकार, समय पर बकाया का भगुतान करना किसी उधारकर्ता से उम्मीद किया जाने वाला स्वाभाविक व्यवहार होना चाहिए। संशोधित रूपरेखा के अनुसार उधारदाता और उधारकर्ता, दोनों में इस प्रकार

सारणी 1: दिवालियापन और वसूली : विभिन्न देशों के अनुभव

अर्थव्यवस्था	रिज़ाल्विंग इन्साल्वन्सी रैंक	वसूली दर (%)	समाधान में लगने वाला समय (वर्ष)	समाधान की लागत (संपदा का %)	परिणाम (0 मतलब टुकड़ों में बिक्री और 1 मतलब लाभकारी संस्था)
नार्वे	6	93.1	0.9	1	1
जापान	1	92.4	0.6	4.2	1
सिंगापुर	27	88.7	0.8	4	1
हांग कांग एसएआर, चीन	43	87.2	0.8	5	1
युनाइटेड किंगडम	14	85.2	1	6	1
कोरिया गणराज्य	5	84.7	1.5	3.5	1
संयुक्त राज्य अमेरिका	3	82.1	1	10	1
जर्मनी	4	80.6	1.2	8	1
रूसी परिसंघ	54	40.7	2	9	0
चीन	56	36.9	1.7	22	0
दक्षिण अफ्रीका	55	34.4	2	18	0
भारत	103	26.4	4.3	9	0

स्रोत: http://www.doingbusiness.org/data/exploretopics/resolving-insolvency

के व्यवहार पनपने चाहिए जिससे एक ऐसी ऋण संस्कृति का सृजन किया जा सके जो एक सुरक्षित और मजबूत बैंकिंग व्यवस्था तथा कारोबार को लेकर एक जीवंत माहौल के अनुकूल हो।

अब मैं 12 फरवरी 2018 की संशोधित रूपरेखा पर अपनी टिप्पणी का सारांश प्रस्तुत करता हूं :

(ए) नई रूपरेखा, दबावग्रस्त आस्तियों के संबंध में हमारी विनियामकीय रूपरेखा को अंतरराष्ट्रीय मानदंडों के समकक्ष लाती है, जहां सब्र के लिए कोई जगह नहीं है।

(बी) यह इसलिए संभव हो गया है क्योंकि यदि कोई उधारदाता समाधान के लिए मुकदमा शीघ्र नहीं कर सकता है तो आईबीसी कर्ज के समाधान के लिए समयबद्ध कानूनी रूपरेखा प्रदान करता है।

(सी) इस रूपरेखा को लागू नहीं किया जाना आईबीसी जैसे ऐतिहासिक आर्थिक कानून को बेकार हो जाने देने के समान होगा।

(डी) यह रूपरेखा प्रक्रियाओं की अपेक्षा परिणामों का विस्तृत वर्णन करते हुए कई अनुचित विनियमों को खारिज करती है।

चार्ट 3: समाधान व्यवस्था और ऋण वसूली

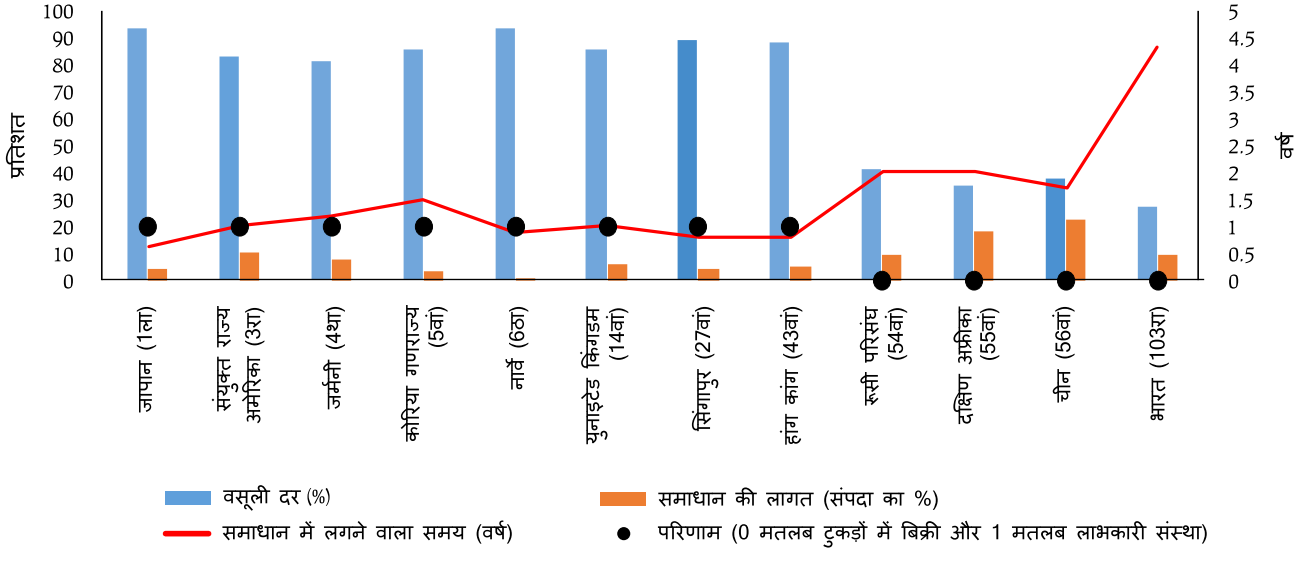

(ई) अंततः, यह रूपरेखा उधारदाताओं और उधारकर्ताओं के व्यवहार में बेहतरी के लिए मौलिक परिवर्तन चाहता है, क्योंकि यह सामान्य रूप से किया जाने वाला कारोबार नहीं हो सकता है।

अपने वक्तव्य को विराम देने से पहले, मैं सावधानी के कुछ और शब्द कहना चाहूंगा। ऐसा प्रतीत होता है कि बैंकरों में खुदरा ऋण एवं व्यक्तिगत ऋण को बढ़ावा देने के लिए एक सामूहिक प्रयास जारी हैं। यह क्षेत्र जोखिम-मुक्त नहीं है और बैंकों को इसे अपनी कॉर्पोरेट ऋण बही की मुश्किल समस्या के लिए एक बड़े रामबाण के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। इसमें भी जोखिम निहित है जिसका समुचित रूप से आकलन, कीमत निर्धारण एवं निराकरण किया जाना चाहिए।

मुझे आशा है कि एनआईबीएम के छात्रों के रूप में आपने जिन साधनों की जानकारी और शिक्षा प्राप्त की है, उससे हमें एक मजबूत और आघात सहनीय बैंकिंग प्रणाली का निर्माण करने में मदद मिलेगी, जिसमें बैंक और उधारकर्ता नव पुनर्गठित एवं समाधान प्रतिमान को समझते हैं, सराहना करते हैं, आत्मसात करते हैं और निर्वाह करते हैं। मैं बैंकिंग और वित्त में प्रतिष्ठित स्नातकोत्तर कार्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए एक बार फिर से सभी स्नातकों को हार्दिक बधाई देता हूं। ये चुनौतीपूर्ण है लेकिन रोमांचक घड़ी है और जैसा कि आप बैंकिंग और वित्त जगत में एक नए या नवीकृत पेशे की सीमा पर खड़े हैं, मुझे विश्वास है कि आप युवाओं के सपने देखना जारी रखेंगे, और अन्य बातों के अलावा, जहां भी आप जाएंगे एक दृढ़ ऋण संस्कृति के निर्माण के लिए प्रयासरत रहेंगे और इस प्रकार जिस नए प्रतिमान की रूपरेखा के बारे में मैंने बताया था उसको सफल बनाएंगे।

मुझे ध्यानपूर्वक सुनने के लिए आप सभी को धन्यवाद।